वार्षिक मूल्य 50 रूपये

धर्म जीवन

सितम्बर – 2020

नीच असरों का बोध

श्रीमान डाक्टर एच. वी. सोनपार

बातचीत द्वारा समस्याओं का हल

भाग्य को भूलिए आगे बढ़िए

जीवन प्रसंग

आलोचना से न हों आहत.....

ख़तरे में है मासूमों का भविष्य

एक पत्र

पशु जगत का सम्बन्ध

देवात्मा की वाणी

जो जन इसलिए कर्मचारी बना है कि वह समाज की रक्षा और उन्नति का काम करेगा, वह यदि ऐसा करने की बजाए उल्टा उसकी हानि का कारण बने, तो तुम सोचो कि वह जन कितना अधम है और उसकी जिन्दगी का यह दृश्य कैसा शोचनीय!

समाज में आकर तुम चाहे पैसे लेकर सेवा का काम करो और चाहे बिना पैसे लेने के करो, देखना यह है कि तुम कोई आला फल निकालकर दिखाओगे? क्या कभी कोई इन्सपैक्टर किसी स्कूल मास्टर के पास आकर यह पूछता है कि तुमने लड़कों को कितने घण्टे पढ़ाया, बल्कि वह सिर्फ पढ़ाई का नतीजा देखता है। इसी प्रकार हम भी यह जानना चाहते हैं कि तुमने औरों को जो सभा करवाई, उसका क्या फल हुआ? तुम चाहे एक एक बात पर चार चार दिन शिक्षा दो, हमने तो यह देखना है कि उससे किसी के कुछ हाथ पल्ले पड़ा है या नहीं? हमारी इस बात से बहस नहीं कि कितने घण्टे काम किया है और कितने घण्टे काम नहीं किया है, हम तो केवल फल से सरोकार रखते हैं।

धर्म मार्ग पर चलने वालों के रास्ते में मान बड़ाई की शक्ति बहुत भयानक रूप से विघ्न डालती है। हमारी नज़रों में वह जन कोई काम का नहीं जो नाम और यश का भूखा हो।

जिस धन और सम्पत्ति के पीछे तुम अन्धे बनते हो, जिस सन्तान के मोह में अन्धे बनते हो, अन्य सम्बन्धियों के मोह में अन्धे बनते हो, नाम और इज्ज़त के मोह में फंसकर अन्धे बनते हो, यहां की सब चीज़ें और सम्बन्धी कि जिनके पीछे तुम अपने आत्मा का खून करते हो, मैं (नेचर) एक दिन तुम से अवश्य छीन लूंगी। और तुम उनके मोह से अपने आत्मा का जो पतन कर रहे हो, उसका तुम्हें महा भयानक फल दिखाकर बताऊंगी, कि तुम कितने महा मूर्ख और अन्धे थे।

सूचना

धर्म जीवन सम्बंधी हर प्रकार की जानकारी के लिए, चंदा आदि भेजने, कोई मैटर आदि भेजने के लिए साथ लिखे पते पर सम्पर्क करें या लिखें। : -श्रीमान बलदेव सिंह जी

House No. 3154, Sector 21-D,
Chandigarh - 160 022
Phone : 0172 - 4638229,
2716914

देव समाज के अकाउंट का पता इस प्रकार है।

DEV SAMAJ (G)
Central Bank of India, Sector 22, Chandigarh
Account No. : 3702002919 | IFSC Code : CBIN0280414

धर्म जीवन

खण्ड 31 अंक 9
सितम्बर – 2020
वार्षिक मूल्य 50 रुपये

सम्पादक
डा. विनोद खेड़ा

सह सम्पादिका
सुरजीत बराड़

नीच असरों का बोध

देव धर्म ही एक ऐसा धर्म है, जो विज्ञान मूलक है। इसमें विज्ञान का पूरा मान सम्मान है। देव धर्म की सारी शिक्षा नेचर के अटल नियमों और नेचर में होने वाली घटनाओं पर आधारित है। विज्ञान की रोशनी के बिना देव धर्म एक कदम भी नहीं चलता।

नेचर की यह अटल सचाई है कि नेचर का प्रत्येक जानदार वा बेजान अस्तित्व असर छोड़ता है। नेचर के सब पदार्थो वा शक्ति के अपने असर हैं, जो धुएं की तरह निकलते रहते हैं, यह असर अपनी अलग अलग तासीर रखते हैं। जैसे आक्सीजन भरपूर हवा सेहत बख़्श है और कार्बन डायकसाईड जानलेवा है, उसी प्रकार असर उच्च वा नीच होते हैं।

देव समाज में शामिल होकर, लगभग सब मनुष्यों को जल्दी ही अच्छे बुरे असरों का मान्सिक ज्ञान हो जाता है। अक्ल से असरों की जानकारी हो जाती है। परन्तु इससे असरों का बोध नहीं होता। असरों का बोध, होश या पूरी उपलब्धि नहीं होती। असरों का बोध होना तब समझा जाता है, जैसे हम दूर से बस या ट्रक को आते देखकर परे हट जाते है, उसके असरों से दूर भागते हैं, उसी प्रकार बुरे असर हमें दूर से दिखाई देने लग जाते हैं और उनमें विचरने से भय खाकर, वहां से परे हो जाते हैं। जैसे सड़ांद और बदबू से हम दूर भागते हैं, नाक, मुंह बंद कर लेते हैं उसी प्रकार बुरे असरों से भी दूर भागते हैं, यदि हम ऐसा नहीं करते, जैसा कि हम आम सेवकों, कर्मचारियों तक को ऐसा बोध नहीं होता, महसूस ही नहीं होता, तो हम उपरोक्त प्रकार की प्रतिक्रिया भी व्यक्त नहीं करते।

एक बहुत योग्य, बुद्धिमान, सांईस ग्रेजुएट, जो समाज की शिक्षा बहुत अच्छी तरह समझते थे, उच्च कोटि के सेवक थे, वह अकसर गांव की चौपाल में बैठकर ताश वा शतरंज जिसको पासा कहते हैं, आम ग्रामीणों के साथ बैठकर खेलते रहते। ग्रामीण लोग गालियां भी निकालते, बुरे बोल बोलते रहते। उनमें बैठना वा खेलना उन्हें कुछ बुरा बोध नहीं होता था, बल्कि सुहावना वा मनोरंजक लगता था। यह क्रिया बताती है कि उस समय उन्हें असरों का कुछ बोध नही था। उन पर उनके आत्मा के लिए घातक असर पड़ रहे हैं, इसका

ज्ञान नहीं था।

इसी प्रकार धन अनुरागियों की संगत में बैठकर धन की चिन्ताएं वा मन्सूबे बनने लाज़मी हैं। स्वाद अनुरागियों की संगत में बदपरहेज़ बनने में देर नहीं लगती। काम अनुराग सम्बन्धी बात चीत सुनने से सुनने वाला भी पतित हो जाता है। मनुष्य को कुछ ज्ञान नहीं होता और असर चुपचाप रंग दिखाते हैं।

इसके उल्ट परोपकारी जनों के पास बैठने से स्वार्थ से निकलने की प्रेरणाएं मिलती हैं। स्वास्थ्य के विषय में ज्ञान के प्रभाव आपको भी स्वास्थ्य के प्रति जागरूक करते हैं। इस प्रकार अच्छे और बुरे प्रभाव जाने अनजाने आपको प्रभावित करते रहते हैं।

ज्ञान केवल जानकारी देता है, प्रेरक या चालक नहीं होता। जब हमारा ज्ञान वा सोझी हमें चलाती है, प्रेरणा देती है, तब बोध पैदा होता है।

परम पू० भगवान सर्वोच्च बोधों के स्वामी हैं। उन्होंने नेचर के भीतर इस अति सूक्ष्म और विशाल खेल को होते खूब देखा है और अधिकारी आत्माओं को दिखाने का प्रबल संग्राम किया है ताकि अधिकारी रूहें नीच असरों की भयानक हानि से बच सकें और उच्च असरों में रह सकें।

गुरू महाराज का सारा कारज उनके अद्वितीय असरों को लेकर ही है, उनके अद्भुत और शक्तिशाली ज्योति वा तेज से भरपूर देव असरों तक अधिक से अधिक रसाई हासिल करना, किसी भी मनुष्य का सबसे उत्तम वा महान सौभाग्य है, असर, नीच असर, उच्च असर और देव असर का ज्ञान भगवान की शिक्षा और रूहों के उच्च परिवर्तन के कार्य के धुरे हैं।

<u>दुर्जन वास न करो, दुर्जन वास से निर्जन वास उत्तम है</u> :

परम पू० भगवान देवात्मा चाहते थे कि उच्च जीवन या धर्म जीवन की प्राप्ति के सच्चे इच्छुक सेवक वा कर्मचारी सदा नीच संगत, नीच जनों वा नीच असरों से उसी प्रकार भय खाएं, जैसे तीर से कौआ डरता है। परन्तु हम उच्च असरों के अबोधी, गुरू महाराज के फरमान या उनकी हमारे भले की इच्छा का अपनी अबोधता के कारण साथ नहीं दे सकते, हम सदा हानि की ओर बेझिझक जाकर हानि वा दुख ही उठाते हैं।

बहुत सम्मान के योग्य श्रीमती सुशीला देवी जी, भगवान के मिशन की बहुत उच्च कोटि की कर्मचारी हो चुकी हैं। उन्होंने पू० भगवान की देव वाणी के नोट नामक पुस्तक में उनकी देव वाणी को लिपिबद्ध किया है। वह बहुत समय गुरू महाराज के चरणों में रहती रही। कई बार सोलन से आते जाते जब रेलगाड़ी भटिंडे में से गुजरती, तो अकसर रास्ते में वह अपने बहन भाईयों को मिलने के लिए गुरू महाराज से छुटटी के लिए निवेदन करती, जो अकसर गुरू महाराज अपने दिल पर पत्थर रखकर दे देते थे। इस सम्बन्ध में "देव वाणी के नोट" पुस्तक में इस प्रकार लिखा हुआ है:-

"तुम ऐसे जनों के पास जाना चाहती हो, जो तुम पर बुरे प्रभाव पाएंगे। दो दिन उनके पास रहोगी, उस वातावरण में सांस लोगी तो अप्रत्यक्ष तौर पर उनके नीच प्रभाव जज़ब करके आ जाओगी।

इसलिए हम तुम्हारा वहां जाना मुनासिब नहीं समझते"।

अपने घर मं एक सम्बन्धी की बिमारी का पता लगने पर वापिस लहौर जाते हुए रास्ते में घर जाने की अनुमति के लिए श्रीमती जी ने निवेदन किया तो देवात्मा सत्गुरू ने फरमाया: -

"तुम चूंकि अपने सम्बन्धियों को मिलने की अकांक्षा रखती हो, इसलिए हमने मन्जूर कर लिया है, परन्तु हम आपका वहां जाना पसन्द नहीं करते। जैसे गुलाब के फूलों से खुशबू का आना ओर गंदगी के ढेर से बदबू का आना एक अवश्यक बात है, इसमें किसी के चाहने या न चाहने की कोई बात नहीं, इस प्रकार जैसे तुम यहां के उच्च प्रभावों को छोड़कर नीच और महा हानिकारक प्रभावों में सांस लोगी, पता नहीं कितनी हानि वा नुकसान उठाकर वापिस आओगी। तुम्हारे सम्बन्धी तो उच्च असरों से कटकर और नीच असरों में नष्ट हो रहे हैं, अब हम चाहते हैं कि अब यदि उनमें से किसी का बचना सम्भव नहीं रहा, तो कम से कम तुम तो बच जाओ, इसलिए हम तो तुम्हें चन्द मिन्टों के लिए भी भेजना पसन्द नहीं करते"।

(जुलाई 1918)

उच्च लोक वासी माननिय श्रीमान गुरूवन्त सिंह जी का देव समाज के इतिहास में विशेष स्थान हैं। उन्होंने 10 - 11 वर्ष गुरू महाराज के हजूर में रात दिन रहकर, उनकी निजी सेवा और घोड़ा बग्गी की सेवा का सोभाग्य प्राप्त किया उनके जीवन की बहुत ज़बरदस्त घटनाएं हैं। यहां एक विशेष घटना का वर्णन करते हैं: -

माननीय श्रीमान गुरूवन्त सिंह जी गुरू महाराज की सेवा में विराजमान थे, जब उन्हें उनके पिता जी की मृत्यु का संदेश मिला। गुरू महाराज जी ने उन्हें वहां जाने की आज्ञा दे दी। श्रीमान जी ने झट जाने की तैय्यारी कर ली और जाते वक्त गुरू महाराज के हजूर में प्रणाम करने के लिए हाज़िर हुए। गुरू महाराज को उनका उच्च वातावरण को छोड़कर उस रोने धोने के दुखदाई वातावरण में जाना बहुत दुखदाई लग रहा था। जाने से पहले पू० भगवान ने कुछ इस तरह फरमाया :- गुरूवन्त सिंह जी, आप पिता की मौत पर जा रहे हो, हमने भी आपको छुटटी दे दी है। परन्तु यदि हम आपकी तरह अपने गुरू की सेवा में होते और हमारे पिता जी का देहान्त हो जाता, हम वहां जाकर कुछ भला कर भी नही सकते, यह पता होता, हम कभी अपने गुरू की संगत छोड़कर न जाते। आपके पिता का देहान्त हो गया है, अब वहां जाकर रोने धोने के सिवा और परिवारिक जनों को मिलने के सिवा तुम कुछ नहीं कर सकोगे। उस समय पू० भगवान को जो नीच असरों की भयानकता का बोध था, वह श्रीमान जी को बिल्कुल नहीं था। वह सोच भी नहीं सकते थे कि अब वहां जाना अकारथ है। गुरू महाराज के फरमाने पर उन्हें झट रोशनी और बल प्राप्त हो गया, गुरू इच्छा को जानकर उन्हें अपना इरादा बदल दिया, फिर वह गुरू दरबार छोड़ कर नहीं गए। दुनियवी सम्बन्धियों वा उनकी इच्छा को मुख्य नहीं रखा, वाह! धन्य हैं ऐसे गुरू और महा सौभागयवान है ऐसे सेवक, जिन्होंने गुरू सेवा का तप कमाया और नीच असरों से बचे रहने का पाठ सदा के लिए पक्का कर लिया।

दूसरी ओर जब श्रीमान गुरूवन्त सिंह जी के पिता बिमार थे, तो पू० भगवान ने ज़ोर देकर

उनकी सेवा के लिए भेजा। पिता उनके समाज में आने के कारण श्रीमान जी से नाराज़ थे, उन्होंने सेवा लेने से इन्कार कर दिया और श्रीमान जी वापिस आ गए, परन्तु गुरू महाराज जी ने फिर उन्हें भेजा और फिर उन्होंने अपने पिता की खूब सेवा की। धन्य हैं ऐसे हितकर्ता।

श्रद्धेय श्रीमान देवत्व सिंह जी को देव असरों के वातावरण का बोध था। उन्होंने ही कहा था कि इस वातावरण से बाहर सारी दुनियां अन्धेर यानि तीरो तार नज़र आती हैं

एक बार पू० भगवान ने 31 मार्च 1915 को विकासालय की संगत खत्म होने पर फरमाया था :-

"अब विकासालय का सैशन ख़त्म हो रहा है, यह विचार करने की बात है कि बाहर जाकर आप लोग क्या करोगे। पहली बात तो यह कि आप बुरे असरों से कैसे बचोगे? यदि तुम्हारे भीतर नीच आत्माओं के लिए आकर्षण है, उनके प्रति कुछ विकर्षण महसूस नहीं होता, तब तुम्हारा नीचे जाना अवश्यम्भावी है। आप किस की संगत करोगे, किसी स्त्री पुरूष आदि की, जो अपने अन्दर से बुरे असर निकाल रहे हैं, यदि तुम बुरे असर ग्रहण करने की योग्यता रखते हो, तो उनके बुरे असर ज़रूर ले लोगे। एक 2 जन को यह सोचने की अवश्यकता है कि मैं जो विकासालय के सैशन के समाप्त होने पर जा रहा हूं, मैं किस लिए जा रहा हूं? किस को अपने पास बैठने देता हूं? किस बात के लिए बैठने देता हूं? यदि कुछ ज्योति तुम्हें मिली हो, तो तुम देख सकोगे कि मेरे गुरू तो देवात्मा होकर भी किसी से इस प्रकार नहीं मिलते बैठते। आपके अन्दर यह भाव हो कि किसी को मिलना है, तो उसको उच्च बनाएं। चुपचाप बैठकर उसके नीच असर ग्रहण नहीं करने। यह असूल समझ लो। किसी के बहकाने पर मत बहको। इसी असूल की पैरवी करो। ऐसा न हो कि आप अन्धे होकर देवात्मा के जीवन को ही घृणा की दृष्टि से देखने लग जाओ। ऐसा करके तुम अवश्य नष्ट हो जाओगे।"

(बलदेव सिंह)

याद रखने योग्य कुछ और सूत्र

1) प्रजा या जनता ही शासक का चयन करती है। आप जैसा शासक चुनेंगे-प्रजा पर भी वैसा ही उसका प्रभाव होगा (यथा राजा तथा प्रजा)।

2) जिनका आचरण अनुचित रहा है, उन्हें आप सबक सिखावें यही धर्म है। यही कर्तव्य है।

3) आप चरित्रवान-आचारवान-सत्यवादी- कर्मठ व्यक्ति चुनेंगे तो देश और समाज का कल्याण होगा और आपको सन्तोष होगा।

4) मनुष्य का मन कोमलता से झुक आता है किन्तु शक्ति का प्रतिरोध करता है।

5) जीवन को रूपान्तरित करने से ही जीवन का विकास हो सकता है। सोने के पुराने आभूषणों की गलाई व ढलाई से ही नये आभूषण बन सकते हैं। इसी प्रकार जीवन का विकास तभी हो सकता है जब हम अपने जीवन की गतिविधियों में आमूल चूक परिर्वतन कर लें।

श्रीमान डाक्टर एच. वी. सोनपार

1. असाधारण सात्विक प्रकृति

मेरी (पी. वी. कनल जी) डाक्टर हासानन्द सोनपार से जानकारी 1898 में हुई थी जब वह गवर्नमैन्ट हाई स्कूल में पढ़ते थे। मैं उनसे ऊपर की क्लास में पढ़ता था। हमारी आपस में कोई मित्रता नहीं थी। वह बहुत अच्छे गायक थे इसलिए स्कूल में उन्हें सब जानते थे और इस रूप में मैं भी जानता था। हमारी मित्रता 1902 में बढ़ी जब हम दोनों ने ही गायकबाड़ बड़ौदा कालेज में पढ़ना शुरू किया। कालेज की छुट्टियों में वह एक दिन मेरे घर आए और मुझे घर में ना पाया। उन्हें पता लगा कि मैं देव समाज के महान कर्मचारी श्रीमान भाई मोहनदेव जी के पास मिलने गया हूं। उन्होंने इच्छा प्रकट की कि मैं उन्हें उनके पास ले जाऊं। मैं उन्हें उनके पास ले गया और पहली ही संगत से डाक्टर सोनपारजी का सारा जीवन बदल गया। वह बहुत मांसाहारी थे। दिन में चार-पांच बार मांस का सेवन करते थे। उन्होंने भाई मोहन देव जी के कहने पर मांस का सेवन छोड़ने का प्रण किया और सारे जीवन में इस प्रण को निभाया।

श्रीमान डाक्टर सोनपारजी के परिवर्तन पर हमारे शहर में हल चल मच गई। वह चोटी के परिवार से सम्बन्ध रखते थे। स्वभावत: ही उनके परिवार के साथ शहर के बड़े-बड़े लोग सम्बन्धित थे। कुछ समय के लिए इनका परिवर्तन उच्च कोटि के समाज में बातचीत का विषय बना रहा। उन्हें प्रसिद्ध बुजुर्गों के पास ले जाया गया ताकि वह उन्हें देव समाज छुड़वाने का प्रयत्न करें। परन्तु ज्यों-ज्यों उनका विरोध ज्यादा हुआ डाक्टर सोनपार जी का देव समाज के साथ लगाव बढ़ता गया। वह फरवरी 1904 में देव समाज के सेवक बन गए। उसी वर्ष वह पूजनीय भगवान देवात्मा के दर्शनों के लिए लाहौर आए। भगवान के दर्शन करने से उनके सात्विक हृदय पर जादू का असर हुआ। दुनिया की शानोशौकत अर्थरहित हो गई। दुनियां के सुख और सामान फीके पड़ गए। भगवान के कार्य में लग जाने में ही उन्होंने अपने जीवन की सफलता देखी। उन्होंने उसी समय संकल्प किया कि वह बी. ए. पास करके अपना जीवन भेंट करेंगे। यह संकल्प उनकी बिरादरी और विशेष कर उनके परिवार के लिए असहनीय आघात था। बिरादरी और परिवार ने पूरा संग्राम किया कि डाक्टर सोनपार जी को इस संकल्प से हटा दें। परन्तु डाक्टर सोनपार जी एक विशेष प्राकृति लेकर पैदा हुए थे। उनकी सात्विक प्रकृति ने देव प्रभावों द्वारा बल और विकास पाकर इनको अपने संकल्प पर सच्चा रखा। 1905 में बी. ए. का इम्तिहान समाप्त करते ही वह भगवान देवात्मा के दरबार में पहुंच गए। भगवान ने उन्हें देव समाज स्कूल मोगा में अध्यापक नियुक्त करके देव समाज की सेवा का अवसर दिया। दुर्भाग्य से वह बी. ए. में फेल हो गए। वह इम्तिहान पास करने के लिए वापस चले गए। इम्तिहान पास करने के बाद उन्हें गवर्नमैण्ट की नौकरी 90 रू० पर मिल गई और 1909 तक उन्होंने यह नौकरी की। परन्तु वह खुश न थे-क्योंकि वह देव समाज में परोपकार का जीवन बिताने के इच्छुक थे। जब उन्होंने भगवान को अपनी इच्छा प्रगट की कि वह उनके दरबार में ही काम आना चाहते हैं तो भगवान ने 30 रु० वेतन पर मोगा स्कूल में काम करने की आज्ञा दी। डाक्टर सोनपार जी ने खुशी-खुशी यह त्याग का जीवन स्वीकार किया। दो तीन वर्ष बाद उन्हें भगवान देवात्मा ने अपना कर्मचारी बनने का शुभ अवसर दिया।

2. कठिनाईयों के समय के सूरमा

डाक्टर सोनपार जी ने जीवन में कई विशेष गुण विकसित किए। उनमें से एक विशेष गुण यह था कि वह बहुत बहादुर थे। कठिनाईयों के समय के सूरमा था। देव समाज की संस्थाओं पर जब-जब आकस्मिक विपत्ति आती थी तो डाक्टर सोनपार जी को संस्था का मुख्य अध्यापक बनाकर भेजा जाता था। श्रीमान लाला गंगाराम जी देव समाज स्कूल मोगा के प्रसिद्ध हैडमास्टर थे। उनका शहर में बहुत अच्छा रसूख था। उन्होंने हैडमास्टर के पद से त्याग पत्र दे दिया। वह देव समाज के लिए मुसीबत का वक्त था और देव समाज का मोगा स्कूल, देव समाज की दो मुख्य संस्थाओं में से एक स्कूल था। मोगे में ऐसे लोग थे जो इस परिस्थिति का फायदा उठाकर उसे हानि पहुंचाना चाहते थे। स्कूल के इस संकट के समय में भगवान देवात्मा ने डाक्टर सोनपार जी को स्कूल की बागडोर सौंपी। उन्होंने स्कूल को ऐसी सफलता से चलाया कि लोग श्रीमान गंगाराम जी को भूल गए। स्कूल के दुश्मनों को मुँह की खानी पड़ी। डाक्टर सोनपार जी के साहस, वीरता और उत्साह ने दुश्मन के मनसूबों को असफल कर दिया।

इसी प्रकार 1915 में देव समाज गर्ल्ज स्कूल फिरोजपुर पर मुसीबत आई। यह देव समाज की दूसरी मुख्य संस्था थी। इस स्कूल के हैडमास्टर बहुत सफल हैडमास्टर थे और लोकप्रिय थे। वह देव समाज स्कूल छोड़कर चले गए। इस संकट के समय भी भगवान देवात्मा ने डाक्टर सोनपार जी को नया हैडमास्टर बनाकर भेजा। उन्होंने अपने साहस और काबलियत से इस संस्था को केवल हानि ही नहीं होने दी परन्तु इस का नाम और भी ऊंचा किया।

1917 में देव समाज ने लाहौर में दीवान हासामल देव समाज स्कूल खोला। उस समय जितने लोग देव समाज की संस्थाओं में काम करते थे उनमें से भगवान देवात्मा ने डाक्टर सोनपार जी को ही नई संस्था का हैडमास्टर नियुक्त किया। लाहौर में बड़े-बड़े स्कूल थे और प्रसिद्ध स्कूल थे। वहां देव समाज के स्कूल के लिए नाम पैदा करना बहुत कठिन काम था और इसके लिए असाधारण काबलियत और वीरता का जज़बा चाहिए था। और वह गुण डाक्टर सोनपार जी में थे। उनमें इन्तजामिया या संचालक योग्यता असाधारण थी। उनमें (Resourcefulness) सूझबूझ बहुत थी। उनका हृदय सूरवीर का हृदय था। आठ वर्ष तक उन्होंने इस संस्था को चलाया और बढ़ाया। उसके बाद समाज ने उन्हें किसी दूसरे काम पर लगा दिया।

कुछ वर्ष बाद लाहौर देव समाज स्कूल पर भी मुसीबत के दिन आ गए तब देव समाज कौन्सिल ने फिर डाक्टर सोनपार जी को इस स्कूल का चार्ज सौंपा। उन्होंने करामात कर दिखाई। डूबती हुई नैया को किनारे पर ले आए। हम सब कौन्सलरज ने ऐसी असाधारण सेवा के लिए उनकी बेअखत्यार सराहना की। संक्षेप में जब भी देव समाज की संस्थाओं पर आपत्ति या Emergency आ पड़ती कि जिसमें संचालक योग्यता, सूझ-बूझ और साहस वा वीरता की असाधारण जरूरत होती थी तो डाक्टर सोनपार जी को ही वह सौंप दी जाती थी। इनकी वीरता और साहस की आखिरी और प्रमुख परीक्षा तब हुई जब देश का बंटवारा हुआ। देव समाज का हैड ऑफिस लाहौर था। देव समाज की सम्पति, पुस्तकालय और विशेषकर देवालय वहीं पर थे। देश के बंटवारे के समय देव समाज के छोटे बड़े सब लोग लाहौर से आ गए। डाक्टर सोनपार जी ही अकेले सेवक थे जो वहां पर डटे रहे। वह उस समय देव समाज के मुख्य संचालकों में से न थे इसलिए उन पर संचालकों की कोई जिम्मेदारी न थी। केवल देव समाज के ही लोग देव समाज छोड़कर नहीं गए, इर्द-गिर्द के सब लोग छोड़कर चले गए थे। डाक्टर सोनपार जी ही अकेले श्री देव गुरु भगवान

मेमोरियल मन्दिर में रहते रहे। यद्यपि मन्दिर में सब तरफ मुसलमान ही मुसलमान थे जिनमें से कोई भी किसी वक्त छुरा मार कर उनकी हत्या कर सकता था। ऐसे भयानक हालात में भी वह सूरमा साबित हुए। उनका यह संकल्प था कि वह मन्दिर छोड़कर नहीं जाएंगे। जब तक उन्हें पाकिस्तान सरकार जबरदस्ती बाहर न निकाल दे। वह अपने संकल्प पर सच्चे रहे और जान पर जोखों और खतरों को खुशी खुशी बरदाश्त किया। जब पाकिस्तान पुलिस ने उन्हें मन्दिर से निकाल दिया तब ही वह हिन्दुस्तान आए।

3. कुछ मोह बन्धनों से वैराग

भगवान देवात्मा के चरणों में रह कर डाक्टर सोनपार जी ने कई सद्‌गुण विकसित किए थे, जिनसे उनका जीवन सुन्दर बन गया। वह बच्चों के मोह बन्धन से ऊपर थे। उनके दो पुत्र थे। उनका इन्होंने अच्छा लालन-पालन किया। पढ़ाया लिखाया और अपने पैरों पर उन्हें खड़ा किया। ऐसी सेवा से वह उनके मोही न बने। नेचर ने उनके इस सद्‌गुण की परीक्षा ली। उनमें से एक लड़का बहुत अच्छी डीलडौल वाला नौजवानी की अवस्था में टाईफाईड में ग्रस्त हो गया। डाक्टर सोनपार जी देव समाज के काम पर सिन्ध गए हुए थे। उन्हें उनके लड़के की बीमारी की खबर दी गई। परन्तु वह अपना काम छोड़ कर लाहौर नहीं आए। अपने हितकारियों को अपने लड़के के लिए लिखते रहे और बाकायदा उसकी खबर रखते रहे।

दुर्भाग्य से उनके लड़के की हालत खराब हो गई। परन्तु तब भी डाक्टर सोनपार जी अपना समाज का काम छोड़ कर न आए। उनकी अनुपस्थिति में उनके लड़के की मृत्यु हो गई। उन्हें बहुत दुःख हुआ - ऐसा दुःख बड़ों-बड़ों को जड़ से उखाड कर फेंक देता है। उनका वैराग्य एक बड़ के पेड़ के समान प्रमाणित हुआ और वह इस दुख की बाढ़ में भी कायम रहा। उन्होंने देव समाज के काम में अपने दुख को भुलाया।

केवल बच्चों के सम्बन्ध में ही वह निर्मोही न थे। वह पैसे, पोज़ीशन और शक्ति के भी मोही न थे। उनके अन्तिम दिनों की एक घटना विशेष है। भगवान देवात्मा की अन्तिम शिक्षा के अनुसार "कि प्रचार विभाग में काम करने वालों को वेतन नहीं लेना चाहिए" समाज से अपना वेतन लेना छोड़ दिया। इस त्याग के कारण उन्हें कई बार भूखा भी रहना पड़ा जो उनके वृद्ध शरीर के लिए बहुत कष्टदायक था। उन्होंने भूखा रहना पसन्द किया परन्तु किसी से सहायता की प्रार्थना न की। वास्तव में बहुत सारे सामाजिक जनों को उनके ऐसे त्याग का ज्ञान तक भी न था। उनकी जल्दी मृत्यु का एक कारण यह भी था कि उनके शरीर को काफी खुराक नहीं मिलती थी। परन्तु उन्होंने अपने इस कदम पर कभी अफसोस नहीं किया।

शक्ति के मोह से भी वह निर्मोही थे। उन्हें कई बार शक्तिपूर्ण पद दिए गए। मैं पहले बता चुका हूँ कि किस प्रकार उन्हें समाज की संस्थाओं को बचाने का कठिन काम दिया जाता था और वह किस सफलता से नैया को किनारे पर लगाते थे। और फिर उन्हें उस संस्था से अलग कर दिया जाता था। समाज ने उन्हें कई अधिकार देकर वापिस ले लिए। कई ऐसे समयों पर वह ऐसे फैसलों को अन्याय मूलक समझते थे, परन्तु ऐसे अन्यायों से वह समाज के कार्य की सेवा में ढीले नहीं पड़े।

4. भगवान देवात्मा के सम्बन्ध में पूर्ण विश्वास

श्रीमान डाक्टर सोनपार जी का भगवान देवात्मा के प्रति पूर्ण विश्वास था और उनके लिए अटल वफादारी थी। वह अपना प्रान्त, अपनी बिरादरी और अपने दुनियवी भविष्य को ऐन जवानी की उमर में

त्याग करके भगवान देवात्मा के चरणों में आ गए। उन्होंने देव समाज की संस्थाओं की नाजुक अवस्थाओं में स्मरणीय सेवा की। तब भी ऐसी घटनाएं हुई जिनमें बड़ी से बड़ी आत्मा के पैर उखड़ जाते हैं। वह 1909 से 1925 तक स्कूलों में हैडमास्टर या मुख्याध्यापक रहे। 1925 में भगवान देवात्मा ने उन्हें संस्थाओं से अलग कर दिया और सब पद छीन लिए। डाक्टर सोनपार जी ने बिना किसी दिक्कत के अपने पद छोड़ दिए। उन्हें पूरा विश्वास था कि भगवान कोई ऐसा कदम नहीं उठावेंगे जो सत्य और शुभ की माँग न हो। जब उन्हें भगवान का आदेश सुनाया गया तो उन्होंने बेअखत्यार कहा कि "भगवान का कहना ठीक है।" मैंने उनसे पूछा कि "अब आप क्या करेंगे? क्या आप सिन्ध वापिस चले जावेंगे?" उन्होंने हँस कर उत्तर दिया, "एक सिपाही कभी भी पीठ नहीं दिखाता। वह लड़ कर मरना ही जानता है। मैंने अपना जीवन भगवान को अर्पित किया था वह आज भी अर्पित है। मैंने उसे सुधारना है ताकि वह फिर से भगवान की खुशी का कारण बनें।" उन्होंने पहला स्मरणीय कदम यह उठाया कि समाज और भगवान की आज्ञा ली कि वह दान एकत्र करें। वह आज्ञा पाकर बम्बई में दान एकत्र करने चले गए। और यह काम बहुत सफलता से किया। फिर वह लाहौर वापिस आए और कुछ समय समाज की एक संस्था में बिना पैसे के काम किया। वह अब स्कूल के कानून के अनुसार स्कूल में काम नहीं कर सकते थे। वह भगवान के पास लाहौर में रहना चाहते थे। उन्होंने अपने निर्वाह के लिए होम्योपैथी में शिक्षा पाई और होम्योपैथी की दुकान खोली। समाज के सब पदों से अलग किए जाने पर भी, और इसलिए समाज का कोई अंग न रह कर भी, वह कर्मचारियों के समान भगवान देवात्मा के चरणों में अधिक से अधिक रहने के इच्छुक रहे।

भगवान देवात्मा के साथ वफादारी, देवसमाज के साथ वफादारी है। देव समाज के साथ वफादारी का एक लक्षण यह है कि उसका सभासद उसके शासन को स्वीकार करे। एक दुर्घटना के कारण उन्हें कर्मचारी के पद से हटा दिया गया। उन्होंने एक जनरल की न्यांई अपनी एकाकारी उतार कर अपने ट्रंक के तले में रख दी और वह उस घड़ी की इन्तजार में रहे कि कब उन्हें फिर एकाकारी पहनने का अधिकार मिलेगा। वह इस वक्त दिल्ली में थे और यह देश के बंटवारे का समय था। उन्हें यह भी कहा गया कि आप देव समाज साधन-स्थान छोड़ कर चले जायें। उन्होंने कौन्सिल को उत्तर दिया कि मैं आपकी आज्ञा पूरी करूँगा। उन्हें कुछ दिन मकान ढूँढने के लिए दिए गए। उन दिनों में मकान मिलना लगभग असम्भव था। उस समय देव समाज के अन्य जनों को कौन्सिल का ऐसा आदेश कठोर अनुभव हुआ। डाक्टर सोनपार जी भला इस वृद्ध और निर्धन अवस्था में कहां जा सकते थे? लेकिन डाक्टर सोनपार जी ने इस आदेश की पूर्ति के लिए इधर-उधर मकान ढूँढना शुरू किया। मकान ढूँढने के दिनों में वह बीमार हो गए और एक हस्पताल के जनरल वार्ड में दाखिल हो गए। वहां उनकी दशा बिगड़ती चली गई, इसलिए वहां से उन्हें वापिस देव समाज के मकान में लाया गया जहां उन्होंने अपने प्राण दिए।

नोट :- श्रद्धेय श्रीमान कनल जी ने डाक्टर सोनपार जी के देहान्त के पश्चात तीन लेख लिखे जो जनवरी और फरवरी 1949 और अगस्त 1951 में सांइस ग्राउण्ड रिलिज्यन में छपे थे। इन तीनों में से ऐसे भागों का रचनात्मक या स्वतन्त्र अनुवाद ऐसे ढंग से किया गया है ताकि वह सेवक माला के लेखों की तरतीब और शैली के अनुसार हों।

(पी०वी० कनल)

बातचीत द्वारा समस्याओं का हल

देव समाज के मासिक अंग्रेजी अखबार "विज्ञान मूलक धर्म" के मई मास, सन् 1991 के अंक में एक लेख छपा था, जिसमें बताया गया है कि परस्पर बातचीत के द्वारा समस्याओं का हल करना एक सभ्य तरीका है और एक दूसरा जंगली तरीका यह तरीका यह भी है कि आपस में "तू-तू, मैं-मैं" हो, अदालतों में धक्के खाए जाएं और लाठी गोली की नौबत पहुंच जाए।

परस्पर बातचीत के करने से पहले अनुकूल वातावरण बनाने की आवश्यकता है। एक पक्ष दूसरे पक्ष को हराने की नीयत न रखे। दोनों पक्ष सहानुभूति और निर्लिपतता की भावना रखें। कई बार हम अपने विचारों और अपनी राय के इतने पक्षपाती हो जाते हैं कि हमें उनमें कोई गलती या त्रुटि ही दिखाई नहीं देती। जहां कट्टरवाद और अड़ियल- पन आ जाता है, वहां बातचीत सफल नहीं हो सकती। "मैं ठीक और दूसरा गलत" - यह भावना बड़ी खतरनाक है।

यदि एक पक्ष अपनी ही बात कहता रहे और दूसरे की सुने न, तो ऐसी बातचीत का कोई लाभ नहीं। एक दूसरे की निन्दा और आलोचना करना आसान है। जब एक पक्ष अपनी ही ध्वनि को सुनता है और दूसरों की बातों के प्रति बहरा हो जाता है, तो बातचीत का प्रयोजन सिद्ध नहीं होता।

बातचीत करते समय अपनीं कमी को देखना दूसरों के गुणों को सामने रखना, सही तर्क और उच्च भावों की अपील करना बहुत जरूरी है। इस प्रकार का ज़िकर इसमें किया गया है। पॉलिटिकल दुनिया में और धर्म की दुनिया में भी परस्पर मतभेद की कोई कमी नहीं है। विविध धर्ममतों ने जितने लड़ाई-झगड़े पैदा किए है, उनकी कोई सीमा नहीं है।

डाक्टर इक़बाल ने लिखा था-

"मज़हब नहीं सिखाता आपस में बैर रखना" परन्तु अब बहुत से लोगों की यह धारणा हो गई है कि मज़हब ही है सिखाता आपस में बैर रखना। हमारे भूतपूर्व राष्ट्रपति डा० राधा कृष्णन् ने तो कह ही दिया था कि यह दुनिया आराम से रहती यदि कोई मज़हब न होता। एक और विचार-शील लेखक Swift ने कहा है कि लोग धर्म को लेकर वाद-विवाद करेंगे। लेख लिखेंगे। लड़ाई-झगड़े करेंगे, मरेंगे। परन्तु धर्म को शान्तिपूर्वक जिएंगे नहीं।

विविध धर्म-मतों के इतिहास का अध्ययन बताता है कि समय के साथ एक एक धर्म-मत में कई कई सम्प्रदाय पैदा हो जाते हैं। ईसाईयों में कैथोलिक और प्रोटैस्टैण्ट हैं। मुसलमानों में शिया और सुन्नी हैं। हिन्दुओं में सैकड़ों सम्प्रदाय है। फिर इन सम्प्रदायों में किसी सिद्धान्त की व्याख्या को लेकर परस्पर मतभेद हो जाते हैं। जो ताकतवर सम्प्रदाय होता है, वह अपने से कमज़ोर सम्प्रदाय को कुचल डालने की कोशिश करता है। आवश्यकता इस बात की है कि विविध सम्प्रदाओं में लोकतान्त्रिक दृष्टिकोण अपनाया जाए और उनमें परस्पर सद्भाव का वातावरण हो। किसी को विधर्मी और क़ाफ़िर कह कर उसे जाति-पाति और देश से निकालने की शिक्षा देना और अनुचित रूप से लांछित लगाने पर उतारू होना बहुत घृणित कर्म

है। विश्व का दो हज़ार वर्ष का इतिहास इस बात का साक्षी है कि बलवान पक्ष ने निर्बल पक्ष को विधर्मी और काफिर कह कर उस पर बहुत जुलम किए हैं। परस्पर सहिष्णुता, "जीओ और जीने दो" की भावनाओं के बगैर दुनिया में काम नहीं चलेगा।

दूसरे विश्व युद्ध के बाद जो Berline Wall (बर्लिन की दीवार) खड़ी करके पूर्वी और पश्चिमी जर्मनी को अलग अलग कर दिया था और माता पिता और उनकी सन्तान, पति पत्नी, भाई बहन आदि एक दूसरे से जुदा हो गए थे, आखिर उस बर्लिन की दीवार को गिरा दिया गया और पूर्वी ओर पश्चिमी जर्मनी एक हो गए। यह पालिटिकल नेताओं का दृष्टान्त है। जो धर्म का दावा करते हैं, उनका क्या हाल है? क्या वह परस्पर सम्बन्धों में बर्लिन की दीवार नहीं खड़ी कर रहे?

चीन ने भारत-भूमि का बहुत बड़ा भाग अपने कब्ज़े में किया हुआ बताया जाता है, फिर भी भारत का प्रधान मंत्री चीन जाता है और चीन का प्रधान-मन्त्री भारत आता है। दोनों मिल बैठ कर बात करते हैं। व्यापार, सांस्कृतिक कार्यक्रम, खेलकूद, विज्ञान, टैकनालेजी आदि में सहयोग करते हैं। और सीमा-विवाद को भी बातचीत द्वारा हल करने का प्रोग्राम बनाते हैं। उसको परस्पर सहयोग करने का यत्न करते हैं।

मज़हब की यह त्रासदी और विडम्बना रही है कि उसमें साधारणत: कट्टरपन और धर्मान्धता आ जाती है। लचीलापन, और "give and take" की भावना का अभाव हो जाता है। सच्चे धर्म का तो काम यह होना चाहिए कि वह तोड़ने का नहीं, बल्कि जोड़ने का काम करे। किसी ने सच कहा है कि सभ्यता की सबसे बड़ी निशानी यह है कि जो लोग हम से भिन्न मत रखते हैं हम उनके साथ सच्चे अमन ओर शान्ति से रहने के योग्य बन सकें। एक प्रसिद्ध फ़िलास्फ़र ने कहा है कि शायद इन्सान की सब से बड़ी महिमा, गरिमा और प्रतिष्ठा इस बात में है कि वह अपनी त्रुटियों को देख सके। और मनुष्य का सब से बड़ा अपराध ही यह है कि वह अपने किसी अपराध को ही देखने के अयोग्य हो जाए।

हमारा सौभाग्य है कि हमें भगवान देवात्मा ने ऐसा देव धर्म प्रदान किया है जो सारी दुनिया में परम एकता लाना चाहता है। जिसकी शिक्षा यह है कि मनुष्य अपने आत्मा के भले के लिए अपनी त्रुटियों को देखे और उनको दूर करे। दूसरों के गुणों को देख कर मुक्त-कण्ठ से उनकी सराहना करे और अपने विरोधी जन को भी कभी घृणा न करे, बल्कि सदा उनका हित चाहे और यथा अवसर और यथा शक्ति उनकी सहायता करे। भगवान देवात्मा अपने प्रति दिन के निज के साधन में अपने जिस जीवन संगीत का गान किया करते थे, उसके कुछ पद यह हैं:-

सकल विभागों में नेचर के,
उच्च गति प्रद परिवर्तन हो,
नीच गति हो विनष्ट दिन दिन,
श्रेष्ठ मेल उनमें उत्पन्न हो।

बरट्रंड रसल ने कहा था कि इस्लाम धर्म में कई बातें अच्छी हैं, परन्तु मुसलमान लोग उन अच्छी बातों पर न चल कर इस्लाम धर्म को बदनाम करते हैं। हम देखें देव धर्म के प्रति हमारी भी कथनी और करनी में अन्तर तो नहीं है?

सुरजीत बराड़

भाग्य को भूलिए आगे बढ़िए

भाग्यवादी बनने से कुछ हासिल नहीं होता। व्यक्ति की वैज्ञानिक सोच ही उसे कुछ नया करने को प्रेरित करती है। तरक्की का रास्ता भी वहीं से निकलता है। कुछ ऐसा ही बता रहे हैं ओमप्रकाश क्षत्रिय 'प्रकाश।

"अरे राजन, क्या टी ब्रेक में भी किताबी कीड़े बने हुए हो। चलो छोड़ो सब, कैंटीन चलते हैं।"

"यार सोहन, बिना पढ़े कैसे चलेगा, तुम्हें सब पता तो है।"

दरअसल, राजन ने अपनी पढ़ाई और मेहनत से बैंक की प्रतियोगी परीक्षा पास कर के बैंक में नौकरी पा ली लेकिन उस ने शुरू से ही आई.ए.एस. बनने का सपना देखा था। इसीलिए जब भी मौका मिलता आफिस में भी आई.ए.एस. परीक्षा के लिए थोड़ी बहुत पढ़ाई कर लेता।

"अरे जो होना होगा, वही होगा। तूं चाहे जितना मरजी पढ़ ले। तुझे अगर आई.ए.एस. बनना होगा तो बन ही जाएगा।" सोहन ने कहा तो राजन हंस दिया। यह सोच सभी की है। हम अवैज्ञानिक ढंग से सोचते हैं। तर्क नहीं करते हैं। हमें विश्वास करना सिखाया जाता है। जो होना है वही होगा? मगर हम नहीं सोचते हैं कि जो होना है वही क्यों होगा? हम जो करेंगे, वैसा क्यों नहीं होगा?

सदेह या तर्क वितर्क करना हमें आता ही नहीं है। यही हमारी अवैज्ञानिकता है।

एक उदाहरण लें। एक डाक्टर हैं। कहीं जाने को तैयार हैं। तभी उस की बेटी छींक देती है। डाक्टर बैठ जाता है और कहता है, "थोड़ा रुक जाइए। बैठ जाइए"।

मित्र पूछता है, "आप डाक्टर हैं। जानते हैं कि छींक क्यों आती है फिर भी आप कहते हैं कि बैठ जाइए।"

इस पर डाक्टर कहता है, "थोड़ा रुक जाने में क्या जाता है?"

यह क्या बताता है? यह बताता है कि डाक्टर विज्ञान पढ़ चुका है। मगर उस की सोच अवैज्ञानिक ही रही है। वह जानता है कि छींक क्यों आती है? फिर भी अंधविश्वास को पकड़े हुए है। अंध विश्वासी सोच ने उसे अवैज्ञानिक बनाए रखा है।

यही अवैज्ञानिक सोच हमारे जनजीवन में रची बसी है। इंजीनियर पुल बनाता है। मकान का निर्माण करता है। मकान बन जाने पर उस पर नीबू मिर्च टंगवा देता है। कहीं मकान को नजर न लग जाए. कहीं टूट न जाए।

जब मकान को नजर लग सकती है तो इंजीनियरिंग किस बात की? उस की पढ़ाई और वैज्ञानिकता किस बात की? इंजीनियर को अपनी विद्या पर विश्वास नहीं है। यही अवैज्ञानिक सोच है। इस सोच ने हमें पिछड़ा और हारा बना रखा है। अतीत में हम सदा क्यों गुलाम रहे? क्या हम कमजोर थे? नहीं हम कमजोर नहीं थे। हम इसलिए हारे, क्योंकि हमारी सोच, अन्यथा कोई कारण नहीं था कि मुट्ठी भर लुटेरे आए, हजारों लोगो के सामने मंदिरों से खजाना लूट ले गए।

मंदिर पर सैकड़ों लोग खड़े थे। वे मंदिर में जो होगा, वही होगा। मंदिर लुटना होगा तो लुटेगा। बचना होगा तो चमत्कार होगा, बच जाएगा।

यदि हम में वैज्ञानिक सोच होती तो मंदिर

नहीं लुटता। बस, जरा सी सोच की बात थी मंदिर पर खड़े लोग भी लुटेरों पर गिर जाते तो वे वहीं दब कर मर जाते मगर इतना सोचता कौन? हम भाग्यवादी जो ठहरे।

हम भाग्यवाद की सोच उतार फेंकते तो मुट्ठी भर व्यापारी हम पर राज नहीं करते। हम ने यही सोच ओढ़ रखी, इसलिए अंग्रेजों से हारे।

अंगरेज एक वैज्ञानिक सोच लिए हुए थे। अंग्रेजों ने तलवार की तुलना मे बंदूक उठाई। अंग्रेज जीत गए। तलवार हार गई नहीं, हमारी अवैज्ञानिक सोच हारी थी।

हमारी सोच थी जो खोज होनी थी, वह हो चुकी है। अब नई खोज नहीं हो सकती है। इसलिए हमारे राजा महाराजाओं ने बंदूके लीं तो अंगरेज तोप ले आए तब बंदूकों के आगे तोपें जीत गई।

जीत बंदूको तोपों की नहीं थी, अंग्रेजों की वैज्ञानिक सोच की थी। वे जानते थे कि जो जितनी तेजी से, जितनी तेज गति से विकास करेगा वह उतना आगे निकल जाएगा।

मगर जब कभी हम विकास की बातें करते हैं तो आध्यात्मिक विकास की ही करते हैं। भौतिक विकास से हम बिदकते हैं। जबकि सब जानते हैं कि बिना रोटी, कपड़े और मकान के विकास नहीं हो सकता है। ये सब भौतिक चीजें हैं।

जब तक भौतिक चीज न हो तो आध्यात्मिक विकास नहीं होगा। तभी तो कहा गया है 'भूखे भजन न होय गोपाला।' बिना भौतिक विकास के आध्यात्मिक विकास कोरी कल्पना है। तब भी हम आध्यात्मिक विकास का पल्ला पकड़े हुए हैं।

आध्यात्मिक विकास के इस मृग-मरीचिका रूपी झुनझुने ने हमारी सोच को अवैज्ञानिक कर रखा है। हम तर्क नहीं करते हैं। संदेह नहीं करते हैं, जो कहा जाता है वह मान लेते हैं। इसी सोच ने हमें अवैज्ञानिक बनाया है।

जब तक यह अवैज्ञानिक सोच रहेगी, तब तक हम हारते और पिटते रहेंगे, यदि हमें विकास करना है तो वैज्ञानिक सोच को अपनाना होगा, हमें भाग्यवाद का पल्ला छोड़ना पड़ेगा। हमें यह तय करना पड़ेगा कि जो होना है वह नहीं होगा। हम जो चाहेंगे वह करेंगे।

हमें नई तकनीक को अपनाना होगा। नए यंत्र लगाने होंगे। नई सोच पैदा करनी होगी। दुनिया के साथ कंधे से कंधा मिला कर चलना होगा, तभी हम विकास कर पाएंगे अन्यथा हाथ धरे, रहने से कुछ नहीं होगा।

यदि जापान की जगह भारत में बम गिरा होता और हिरोशिमा, नागासाकी जैसी तबाही हुई होती तो आज भी हम लंगड़ी लूली संतान पैदा कर रहे होते। मगर जापान उठ खड़ा हुआ। उस ने वैज्ञानिक सोच से हिरोशिमा व नागासाकी का नवशा बदल दिया।

वे जानते थे कि आदमी जो चाहता है, वह कर के बता देता है। विज्ञान से ही विकास संभव है अन्यथा आज हम चांद पर नहीं जा पाते? यह हमारी वैज्ञानिक सोच का नतीजा है कि आज हम राकेट और कंप्यूटर जैसी तकनीक विकसित कर सके हैं।

जब तक हम तकनीकी सोच और वैज्ञानिक तर्कबुद्धि प्राप्त करने का प्रयास नहीं करेंगे तब तक हम यूं ही गरीब, दरिद्र और भिखमंगे बने रहेंगे। क्योंकि वही देश तरक्की कर सकता है जहां की जनता तरक्कीपसंद और विकास को शीघ्र गले लगाती हो अन्यथा हम योग्य होते हुए भी इसी तरह हारते रहेंगे।

(सरिता से साभार)

जीवन प्रसंग

बहुत सालों पहले, एक बुजुर्ग महिला पिट्र्सबर्ग में एक डिपार्टमेंटल स्टोर में सामान की ट्रॉली लिए घूम रहीं थी। महिला के हाव - भाव से सेल्समैन जान गए थे कि उन्हें कुछ खरीदना नहीं है। इसलिए कोई भी सेल्समैन उन पर ध्यान नहीं दे रहा था। जैसे ही महिला किसी काउंटर पर पहुंचती, वहां मौजूद सेल्सपर्सन उन्हें नज़र अंराज़ कर दूसरे कामों में लग जाता।

अंतत: वो एक ऐसे कांउटर पर पहुंची, जहां एक नौजवान सेल्समैन, चेहरे पर मुस्कान लिए उनकी तरफ बढ़ा और पूछा, 'मैम, यदि आप कुछ ढूंढ रही हैं, तो क्या मैं आपकी मदद कर सकता हूं?'

बुजुर्ग महिला ने जवाब दिया, 'नही मुझे कुछ खरीदना नहीं है। मैं तो सिर्फ वक्त गुजार रही हूं। बाहर बहुत बारिश है न इसलिए। जैसे ही बारिश रुकेगी, मैं चली जाऊंगी।'

यह सुनकर भी युवक का रवैया बदला नहीं। उसने बड़े सभ्य तरीके से पूछा, 'ठीक है मैम मैं आपके लिए कुर्सी ले आता हूं। बारिश रुकने तक आप आराम से बैठिए।' इतना कहकर युवक उनका जवाब सुने बिना ही कुर्सी लेने चला गया।

बारिश रुकते ही वो सेल्स मैन न सिर्फ उस महिला को बाहर सड़क तक छोड़ने गया बल्कि उन्हें तहजीब के साथ गुड बाय भी विश किया। जाते - जाते महिला ने उस युवक का विज़िटिंग कार्ड ले लिया।

कुछ महीनों बाद उस स्टोर के मालिक को एक पत्र मिला। उस पत्र में उसी सेल्समैन को स्कॉटलैंड भेजने की बात लिखी थी, जहां उसे घर को फर्निश करने का काम दिया गया था। स्टोर के मालिक ने पत्र का जवाब दिया कि कि यह सेल्समैन आपके काम के लिए उपयुक्त नहीं है क्योंकि यह फर्निशिंग डिपार्टमेंट से नहीं है। बेहतर काम के लिए किसी अनुभवी व्यक्ति को भेज सकते हैं। यदि आप अनुमति दें तो।

पत्र के जवाब में सिर्फ उसी युवक को भेजने की मांग की गई और पत्र पर स्कॉटलैंड के जाने - माने रईस एंड्रयू कारनेगी के हस्ताक्षर थे। वो अपने घर को उस सेल्समैन से फर्निश कराना चाहते थे। स्टोर में बारिश रुकने का इंतज़ार करने वाली वह बुजुर्ग महिला दरअसल एंड्रयू कारनेगी की मां थीं। इसके बाद वो नौजवान फर्निशिंग के काम के लिए स्कॉटलैंड आया। काम के बदले उसे हज़ारों डॉलर मिले। और एक दिन वो उसी डिपार्टमेंटल स्टोर का आधा मालिक बन गया।

एंड्रयू कारनेगी ने कहा है - अगर आपमें खुद को एक कदम आगे ले जाने की प्रेरणा नहीं हो, तो अपने औसत स्वरूप को स्वीकार कर लें।

सच तो है, जो एक कदम अतिरिक्त चल पाते हैं, वे ही तो दूसरों से अलग बनते हैं। सेल्समैन वाले वाक्य से समझिए। उसे पता नहीं था कि वो महिला किसी रसूखदार की मां हैं। वह तो केवल किसी की एक्सट्रा मदद कर रहा था। बाद में जो मिला, वो नसीब ने उसे +1 हुनर के लिए दिया था।

इंसान का हर हुनर उसकी ताकत बनकर हमेशा उसके साथ रहता है। हुनर, मौका मिलते ही मुसीबत और काम के समय अपना काम कर दिखाता है। जैसे कि यदि आपके भीतर ह्यूमर नाम का हुनर है, तो आप किसी भी दुखी व्यक्ति को खुश कर सकते हैं... आगे बढ़कर मदद करने का जज़्बा है, तो किसी की मदद कर सकते हैं.....। अपने काम से अलग कोई भी दूसरा काम सीखने का मौका हाथ लगे, तो झट से लपक लें। न जाने कब यह काबलियत आपके या दूसरों के काम आ जाए।

आलोचना से न हों आहत.....

दुनिया में एक कायदा सालों से चला आ रहा है और वह यह है कि जब भी आप कोई अलग काम करते हैं तो पहले लोग आप पर हंसते हैं, फिर आपका विरोध शुरु कर देते हैं ओर अंत में आपके साथ हो जाते हैं। वैसे भी संयमी व्यक्ति आलोचना का नकारात्मक प्रभाव अपने ऊपर नहीं पड़ने देता। वह देखता है कि उसकी आलोचना क्यों हुई? फिर वह अपनी गलती को सुधारता है और आलोचक को अपना सबसे बड़ा हितैषी मानता है। 'भागो मत, जागो' पुस्तक में इसका बड़ा ही सटीक उदाहरण पढ़ने को मिलता है- एक देश के राष्ट्राध्यक्ष ने पद सम्भालते अपने मुख्य सचिव से कहा कि वह उसके आलोचकों की फेहरिस्त तैयार करें। जिस व्यक्ति ने कभी भी, चाहे थोड़ी सही ही सही उसकी आलोचना की हो उसका नाम इस सूची में होना चाहिए, यह आदेश दिया।

सचिव ने तुरंत सूची तैयार की। अध्यक्ष ने कहा, 'अब जो मेरे कट्टर आलोचक हैं, उनके नाम अलग छांट लो।' सचिव ने ऐसा ही किया। फिर पूछा, 'सर, बताइए इनके साथ कैसा सुलूक किया जाए? और इन्हें क्या सज़ा दी जाए?

राष्ट्राध्यक्ष ने कहा, 'कैसी सज़ा? इन सभी को सम्मानपूर्वक यहां बुलाईए। मैं इन्हें अपना प्रमुख सलाहकार नियुक्त करना चाहता हूं।

यह जवाब सुनकर सचिव को बहुत आश्चर्य हुआ। उसके चेहरे पर छाई प्रश्नों की लकीरें पढ़कर राष्ट्रध्यक्ष ने कहा, 'आज मैं जिस पद पर पहुंचा हूं, उसमें इन लोगों का बड़ा योगदान है। समय समय पर मेरी आलोचना करके यदि ये मुझे सचेत न करते तो शायद इतनी जल्दी मैं इस पद पर नहीं पहुंच पाता। आप भी आलोचना से कभी आहत न हों, बल्कि उसे चुनौती मानकर आगे बढ़ें। अपना आत्मनिरीक्षण करें। अपनी गलतियों को तुरंत सुधारें। आप पाएंगे कि आपने जो सोच रखा था, उसे बड़ी तेज़ी से हासिल कर लिया। अनुचित आलोचना छिपी हुई प्रशंसा है। कोई भी मरे हुए इन्सान को लात नहीं मारता।'

जब डॉ राजेंद्र प्रसाद ने किसान मित्र से दिखाई आत्मीयता

डॉ. राजेंद्र प्रसाद का राष्ट्रपतिकाल पूर्ण होने पर वे पटना के सदाकत आश्रम पहुंचे। उन्हें उस स्थान से अत्यधिक स्नेह था, क्योंकि एक युवा क्रांतिकारी के रूप में वे वहां रह चुके थे। एक दिन उनका एक किसान मित्र किसी केस के सिलसिले में पटना आया था। किसान ने सोचा कि अपने पुराने मित्र राजेंद्र से मिल लेते हैं। देखें, पहचानता है या नहीं? वह सदाकत आश्रम पहुंचा और सिपाही से अंदर जाने के लिए अनुमति मांगी। किसान से सिपाही ने प्रयोजन पूछा। किसान बोला- 'बस, हमें राजेंद्र से मिलना है' सिपाही ने कहा- 'अभी नहीं मिल सकते। साहब आराम कर रहे हैं।' किसान नाराज होते हुए बोला- 'अरे भाई, हम लोग आंदोलन में साथ थे, मिलने दो।' सिपाही ने कहा- 'जाओ-जाओ, सभी ऐसा ही कहते हैं।' तभी राजेंद्र बाबू ने भीतर से किसान मित्र की आवाज पहचानकर उसे अंदर आने देने को कहा। किसान अंदर पहुंचा और यह देखकर हैरान रह गया कि राजेंद्र बाबू बांस की खटिया पर दरी डालकर लेटे हुए हैं। इतने बड़े पद पर रहने के बाद भी राजेंद्र बाबू उसका हाथ पकड़कर रूंआसे होकर कहने लगे- 'हम अपने देश के लिए कुछ खास नहीं कर पाए।' किसान ने जब उनके बड़े महत्वपूर्ण राष्ट्रहितकारी कार्यों की चर्चा की, तब भी वे खेद जताते रहे कि हम कुछ नहीं कर पाए। वस्तुत: देश ओर समाज के लिए महत्वपूर्ण योगदान देकर भी स्वयं को अकिंचन मानने की प्रवृत्ति सही मायनों में बड़प्पन का लक्षण है।

ख़तरे में है मासूमों का भविष्य

लाड़ - प्यार में बच्चों को स्मार्टफोन देना उनके भविष्य के लिए परेशानी भरा हो सकता है। आज हालात ये हैं कि मात्र एक साल का बच्चा मोबाइल के बग़ैर व्यस्त नहीं रह पाता। यह लाड़ महंगा पड़ सकता है।

छोटी उम्र के बच्चों के फोन के इस्तेमाल के आंकड़े चौंकाने वाले हैं। मात्र डेढ़ साल का बच्चा 5 घंटे तक मोबाइल में खोया रहता है। यह वाक़ई गम्भीर मामला है। माता - पिता को बच्चे के फोन ज्ञान पर गर्व होता है। लेकिन क्या वाकई कम उम्र में स्मार्टफोन चलाना कोई समझदारी वाली बात है या स्मार्टफोन का लॉक खोल लेना बौद्धिक स्तर का कोई पैमाना है? बिल्कुल नहीं। जिस तरह बच्चे सारी चीज़ें सीखते हैं, यह भी उसी किये का हिस्सा है। बच्चे के रोने या किसी तरह की जिद करने पर बहलाने के लिए फोन देना उसे इस नई लत का गुलाम बनाने का पहला क़दम है।

कमज़ोर होती आंखें - कम उम्र के बच्चों में स्मार्टफोन का क्रेज बहुत तेज़ी से बढ़ा है। पहले न्यूनतम उम्र से 3 से 5 साल देखी गई थी लेकिन हाल ही के कुछ वर्षों में 12 महीने से 18 महीने तक के बच्चों में स्मार्टफोन के इस्तेमाल की अप्रत्याशित बढ़ोतरी देखी गई है। इस आयु के बच्चों के हाथ छोटे होने के कारण वे फोन के स्क्रीन को आंखों के करीब ले जाते हैं जिससे उनकी आंखों को नुकसान पहुंचता है।

दूरगामी नुकसान - बड़े होने पर बच्चों को जल्दी चश्मा लगने, आंखों में जलन और सूखापन, थकान जैसी सम्स्याओं का सामना करना पड़ रहा है। उसके व्यक्तित्व विकास में कई तरह की गड़बड़ियां पैदा होती नज़र आ रही है।

कम्प्यूटर विजन सिंड्रोम - स्मार्टफोन चलाते वक्त हमारा सारा ध्यान एक ही जगह पर केंद्रित होता है, जिसकी वजह से हम पलकें कम झपकाते हैं। इसे कंप्यूटर विजन सिंड्रोम कहते हैं। स्क्रीन और आंखों के बीच की मानक दूरी 35 से 40 सेमी रहनी चाहिए। माता - पिता इस चीज़ का ध्यान रखें के बच्चे आधे घंटे से ज़्यादा समय तक स्क्रीन के सामने न बैठे रहें।

मनोवैज्ञानिक प्रभाव

कम उम्र में स्मार्टफोन की लत की वजह बच्चे सामाजिक तौर पर विकसित नहीं हो पाते हैं। बाहर खेलने न जाने की वजह से उनके व्यक्तितव का समुचित विकास नहीं हो पाता। ज़्यादा मोबाइल गेम और कार्टून देखने का बच्चों पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। मनोविशेषज्ञों के पास कुछ केस ऐसे भी आते हैं कि बच्चे अपने पसंदीदा कार्टून कैरेक्टर की तरह ही हरकते करने लगते हैं। उनके दिमागी विकास में बाधा पहुंचती है। बच्चे भावानात्मक रूप से कमज़ोर होते जाते हैं। वहीं हिंसक गेम्स बच्चों में आक्रामकता को बढ़ावा देते हैं।

बच्चे अक्सर फोन में गेम खेलते या कार्टून देखते हुए खाना खाते हैं। इस वजह से बच्चों को भूख का अंदाज़ा नहीं होता। मस्तिष्क के मध्य भाग में स्थित हायपोथैलेमस ग्रंथि भूख और प्यास को नियंत्रित करने में अहम भूमिका अदा करती है। लेकिन खाना खाते वक़्त फोन में लगे रहने की वजह से बच्चे अधिक या कम भोजन करते हैं। अधिक समय तक इस आदत में मोटापे के आसार बढ़ जाते हैं। इस तरह की आदतों से उनके व्यवहार में अवांछनीय बदलाव दिखाई देने लगते हैं।

फोन आदि के अधिक इस्तेमाल के कारण बच्चे बाहरी दुनिया से संपर्क करने में कतराते है। एक बार इस की लत पड़ जाने पर यदि उन्हें बदलने की कोशिश की जाती है तो वे चिड़चिड़े, आक्रामक और कुंठाग्रस्त हो जाते हैं। लोगों से घुलने-मिलने में बच्चे झिझकने या कतराने लगते हैं और अकेले रहने का मौका ढूंढने लगते हैं।

सुझाव

माता-पिता बच्चों के सामने एक सी राय रखें। यदि मोबाइल या किसी और चीज़ के लिए मां ने मना किया है तो पिता भी मना करें। दोनों के अलग-अलग जवाब देने की स्थिति में बच्चे यह भांप जाते हैं कि किसके पास से अनुमति मिल सकती है।

बच्चों का इमोशनल ड्रामा सहन न करें। अपने जवाब या राय में निरंतरता रखें। एक दिन 'न' और दूसरे दिन 'हां' न कहें। रोने लगें तो उनपर विशेष ध्यान न दें। बाद में प्यार से समझाएं। रोने पर उन्हें दुलराने पर वे अपनी हर जिद रोकर मनवाने लगेंगे।

मोबाइल उनकी ज़रूरत अनुसार और निश्चित समय के लिए दें। आधे घंटे या 45 मिनट का समय तय कर अलार्म सेट कर दें।

अगर आप बच्चों से कुछ ले रहे हैं तो उसकी पूर्ति के लिए आपको कुछ देना भी होगा। इसके लिए उनके साथ वक्त बिताएं। बच्चों का खेल, किताबों की तरह रुझान बढ़ाएं। उनके सामने मोबाइल का कम से कम इस्तेमान करने की कोशिश करें।

छोटे-छोटे सवालों के जवाब के लिए गूगल की मदद न लें। गणित के सवालों को कैलक्यूलेटर की मदद से हल करने की बजाय खुद हल करें और बच्चों को भी खुद ही जवाब खोजने के लिए प्रेरित करें।

इंटरनेट पर कोई चीज़ अच्छी और ज्ञानवर्धक है तो उसे दिखाने के लिए समय निर्धारित करें। साथ बैठकर देखें। स्मार्ट टीवी के माध्यम से स्मार्टफोन के स्क्रीन को टीवी में प्रोजेक्ट कर सकते हैं। जिससे आँखों और स्क्रीन के बीच पर्याप्त दूरी भी बनी रहेगी।

एक पत्र

एक सेवक एक कर्मचारी की सेवा में लिखते हैं :-

श्रीमान जी, केसूपुरा में पहुँचकर जिस प्रकार आपने हमारा भला किया है, बहुत कष्ट उठाकर हमारे गांव में पहुँचते रहे और जीवनों को परिवर्तित किया, उस सबको याद करके बार बार आपको धन्यवाद देता हूं और तुम्हारी लम्बी उम्र के लिए कामना करता हूं। सच्चे दिल यह अनुभव करता हूं कि यदि सम्भव होता तो मैं अपनी कुछ न कुछ उम्र आपको दे देता। ऐसे आत्मा बार बार इस दुनिया में नहीं आते। श्रीमान जी, जैसे आपने मुझे बचाने का संग्राम किया है, उसके लिए मैं आपका कैसे धन्यवाद करूं।

मुझे तो यह अनुभव होता है कि माता-पिता और बहन भाईयों के बिना मेरी क्या हस्ती है। डाक्टरों, अध्यापकों सबने मेरी जिन्दगी को संवारा है। एक 2 सांस उपकारियों की सहायता पर निर्भर है। श्रीमान जी, यह सब आपके द्वारा गुरु महाराज की रोशनी पहुँचने के कारण सम्भव हुआ है। मुझे अपना पापी जीवन याद आता है और आपकी सहायता याद आती है, तो धन्य

धन्य होकर प्रणाम करने के लिए मजबूर हो जाता हूं। यदि ऐसे उपकारियों को भूल जाऊं तो बहुत घाटा खाऊंगा। देव धर्म के कर्मचारियों को याद करता हूं और ऐसा महसूस करता हूं कि एक दिन मैं भी भलाई के काम में रात दिन दे दूंगा, जो दूसरों के काम आते हैं, वह मुबारक हैं।

मुझे मेरे सत्गुरू ने नई आध्यात्मिक आँख दी है, जब यह आँख काम करती है, तो कमाल हो जाता है, यदि यह आँख काम नहीं करती तो अन्धेरा छा जाता हैं, उसी समय अपनी हानि होनी शुरू हो जाती है। ज़िन्दगी के पुर्जे ठीक काम नहीं करते। अब पता चलता है कि घृणा खत्म हो जाए तो क्या कमाल हो जाए। यह घृणा ही सारे सम्बन्धों को फाड़ती है। यह विस्फोटक सामान मेरे अन्दर है, जब घृणा नहीं करता तो कमाल होता है। सब सम्बन्धी प्यारे लगने लगते हैं। बहन भाईयों को मिलने को दिल करता है। जब यह घृणा ज़ोर पकड़ती है अपने ही पराए लगने लगते हैं। मेरा इस नीच घृणा ने बहुत नुकसान किया है। यदि इस पर काबू न पाया तो मेरी बहत हानि होगी।

मुझे कभी कभी गुरु महराज की रोशनी मिलती है, तो अपना आप नज़र आता है तो विकासकारी शक्तियों और उपकारियों का धन्यवाद करता हूं। साधनों में ही अपने पाप नज़र आते हैं, मैं एक सुअर की तरह गन्दगी में लथपथ था और गन्दगी फैलाता था। गुरु महाराज ने मुझे साफ जगह पर रहना सिखाया। परन्तु फिर भी मैं कभी न कभी गन्दगी की ओर चला जाता हूं। दिल से चाहता हूं कि मैं इस गन्दगी को ख़त्म करूं, अपना आत्मिक भला करूं। परन्तु मेरी प्रकृति ऐसी है, जैसे कोई मालिक सूअर को साफ सुथरा करके बांधता है, पर खुलते ही वह गन्दगी की ओर भागता है, इसी प्रकार गुरु की कृपा से मैं कुछ साफ सुथरा होता हूं, परन्तु असरों से दूर रहकर फिर अपनी बर्बादी करता हूं। मैं उच्च संगत में रहकर साफ सुथरा रहना चाहता हूं, संगत में गुरु महाराज के प्रभाव इस प्रकार बुराईयों को चुनते हैं जैसे चुम्बक लोहे को अलग कर देता है। मैं कभी ऐसी चुम्बक रूपी रोशनी को भूल न जाऊं। मैं अपने आपको राजाओं और महाराजाओं से भी सौभाग्यवान समझता हूं, चाहे मुझे फूस की झोंपड़ी में ही क्यों न रहना पड़े।

मैं ऐसे गुरु को कैसे भूल सकता हूं, जिन्होंने मुझे जीवन दान दिया है, नया जीवन प्रदान किया है। मैं उनकी महिमा गाता नहीं थकता। अब सच्चा दाता मिल गया है, अब किसी बात की परवाह नहीं। पापी जीवन से बहुत कुछ बच गया हूँ।

(एक सेवक)

शोक समाचार

अति दुख और शोक का विषय है कि बहुत सत्कार और सन्मान के योग्य बीबी ज्ञानवती जी का पिछले दिनों 9 अगस्त को देहांत हो गया है। बीबी जी ने देव समाज मन्दिर की बहुत श्रद्धा से देखभाल की और स्वयं साफ सफाई करती रही हैं, वहां रहकर उन्होंने अपनी सभाओं और सेवकों के घरों में विज़िट के द्वारा गुरू महाराज की शिक्षा फैलाने का काम किया। लोकल सेवकों के साथ उनका घनिष्ट सम्बन्ध रहा है। हमारी बेनती है कि उनसे सम्बन्धित जो उपकृत जन अपने भावों को लिखकर भेज सकते हों वह अवश्य भेजें ताकि उनको यथेष्ट श्रद्धांजली दी जा सके। हम उनके आत्मा की सुरक्षा और परलोक में उन्हें उच्च धर्म सम्बन्धियों की सहायता मिल सके, ऐसी हृदय-गत कामना करते हैं।

आपका धर्म मार्ग का साथी
बलदेव सिंह

Published on 5th of the month
20
Regd. Postal No.CHD /0077/ 2018-2020
Regd. with Registrar News Paper No. 72258/88

पशु जगत का सम्बन्ध

पूजनीय भगवान के सम्बन्ध तत्व की शिक्षा में पशु जगत के सम्बन्ध में भी बहुत लाभदायक आदेश दिए हैं। उनकी अद्वितीय शिक्षा के अनुसार पशु जगत हमारा पूर्वज है। उसी में से विशेष विकास पाकर विशेष रूप से विकसित बुद्धि शक्ति लेकर मनुष्य विकसित हुआ है। मनुष्य पशुओं का ही विकसित रूप है। इसलिए हमारा उसके साथ घनिष्ट सम्बन्ध है। उसके द्वारा दूध और उससे बने कितने व्यंजन हमें प्राप्त हुए हैं। खेतों में हल जोतकर हमें भोजन दिया है। घोड़े मनुष्य के लिए कितने उपयोगी सिद्ध हुए हैं, यह सबको ज्ञात है। कुत्तों ने अपनी वफादारी के बहुत सुन्दर उदाहरण पेश किए हैं। इतने गुणकारी और उपकारी पशुओं पर मनुष्य जाति के द्वारा बेहद अत्याचार हुए हैं और रोज़ाना हो रहे हैं, बेशक अब कुछ गिणती के लोग शाकाहारी होने के मार्ग पर पड़ रहे हैं, परन्तु अब भी लाखों पशुओं का कत्ल एक दिन में मनुष्य की स्वाद की तृप्ति की भेंट चढ़ जाता है। पूजनीय भगवान ने पशु जगत के सम्बन्ध में स्वयं भजन का सर्जन किया, जो इस प्रकार है :-

पशु जगत से हम हैं आए, उसको अपना जानेंगे,
उसके संग सम्बन्ध अपना, निश्चय हम पहचानेंगे।
पशु जगत को लाके सम्मुख, मन में हम यह ठानेंगे,
उस अपेक्षा नीच जीवन, हम कभी नहीं धारेंगे।
पशु जगत में जो है सद्‌गुण, उनको भी हम जानेंगे,
करके दिन दिन ग्रहण उनको, उच्च होते जाएंगे।
अपने आश्रित जन्तुओं को, आत्म व्रत्त हम पालेंगे,
और किसी को भी अकारण, कलेश नहीं पहुंचाएंगे।
जो है हितकारी पशु, हित उनका सन्मुख लाएंगे,
करके हित हम उनका साधन, धन्य बनते जाएंगे।

श्रीमान बलदेव सिंह जी, एम. ए, (लाईफ़ वर्कर) मंत्री-देव-धर्म-मिशन, प्रिंटर, पब्लिशर और मालिक
"धर्म जीवन" ने ***Surya Laser Den, Chandigarh*** *से छपवाकर*
म. नं. 3154, सैक्टर 21-डी, चण्डीगढ़ से प्रकाशित किया।

Book Posts